मोटे मुनाफे की कीमत गरीब मरीज़ क्यों चुकाएं

भारत डोगरा

न्याय संगत कीमत नियंत्रण के अभाव में विश्व स्तर पर करोड़ों मरीज़ों के जीवनरक्षक दवाओं से वंचित होने का मामला ज़ोर पकड़ रहा है। चिंता की बात यह है कि हाल के वर्षों में अधिक महंगी दवा बेचने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कानूनों-नियमों का अधिक समर्थन मिला है, जबकि सस्ती दवा बनाने वाली कंपनियों को नए नियम कानूनों ने कमज़ोर किया है। भारत के लिए यह विशेष महत्त्व का विषय है क्योंकि अपेक्षाकृत सस्ती दवा व जेनेरिक दवा बनाने वाली कंपनियों में भारतीय कंपनियों का विशेष स्थान रहा है।

विश्व स्तर पर उचित कीमत पर दवा उपलब्ध करवाने में इन कंपनियों का स्थान कितना महत्त्वपूर्ण हो सकता है, इसके दो उदाहरण उल्लेखनीय हैं। एड्स की पहली लाइन की जो दवाएं विकसित की गई थीं, आरंभिक दौर में वे इतनी महंगी थी कि प्रति मरीज़ एक वर्ष का खर्च लगभग 15,000 डॉलर आ रहा था। इन दवाओं के जेनेरिक व सस्ते संस्करण का उत्पादन कर बाद में प्रति मरीज़ प्रति वर्ष दवा का खर्च 80 डॉलर तक कम किया जा सका। इसके अतिरिक्त भारतीय जेनेरिक दवा कंपनियों ने तीन दवाओं को मिलाकर एक गोली बनाई जिससे इलाज सस्ता भी हुआ व सरल भी।

दूसरा उदाहरण कैंसर की महत्त्वपूर्ण दवा इमेटिनिब मिसायलेट का है। एक विशेष किस्म के कैंसर - क्रोनिक मायलॉयड ल्यूकेमिया - का निदान होने पर मरीज़ को शेष जीवन भर यह दवा लेने को कहा जाता है। अतः इस दवा की कीमत को कम करना बहुत ज़रूरी है। एक बहुराष्ट्रीय कंपनी अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में इस दवा को ग्लीवेक के नाम से जिस महंगे दाम पर बेचती रही है उससे प्रति मरीज़ प्रति वर्ष खर्च 12 लाख रुपए आता है। दूसरी ओर, भारत में सस्ता व जेनेरिक संस्करण बनाने वाली कंपनियां इसे जिस कीमत पर बेचती हैं उससे प्रति मरीज़ प्रति वर्ष एक लाख से कुछ कम खर्च होता है।

एक-सी दवा की कीमत में इतना अधिक फर्क आने के कई कारण हैं। इनमें सबसे बड़ा कारण यह है कि हाल के वर्षों में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के समझौतों के साथ पेटेंट कानूनों को बहुत अनुचित ढंग से जोड़ दिया गया। इस कारण दुनिया के सभी देशों को मजबूरी में पेटेंट या बौद्धिक संपदा के कानूनों में ऐसे बदलाव करने पड़े हैं, जिससे बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए बहुत-सी दवाओं के पेटेंट प्राप्त करना, इनकी बहुत अधिक कीमत वसूलना व अन्य कंपनियों द्वारा इस दवा के उत्पादन व बिक्री को नियंत्रित करना संभव हो गया। भारत को भी अपने पेटेंट कानूनों में इस तरह के बदलाव करने पड़े, जिसके कारण भारत की दवा कंपनियों के लिए भारत में व भारत के बाहर सस्ती पेटेंट-मुक्त या जेनेरिक दवाइयां उपलब्ध करवाना निरंतर कठिन होता जा रहा है। इस कारण बार-बार यह स्थिति उत्पन्न हो रही है कि जीवनरक्षक दवाएं अपेक्षाकृत सस्ते दामों पर उपलब्ध करवाना संभव तो है परंतु मोटे मुनाफे की रक्षा करने वाले नए नियम-कानून इन सस्ती दवाओं से मरीज़ों को वंचित कर रहे हैं। इस तरह दुनिया के करोड़ों लोगों का सबसे बुनियादी अधिकार यानी जीवन का अधिकार बार-बार आहत हो रहा है।

इसका सर्वाधिक खामियाज़ा गरीब व विकासशील देश भुगत रहे हैं क्योंकि धनी विकसित देशों में तो अधिकांश मरीज़ों को सरकारी स्वास्थ्य बजट से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जीवन रक्षक दवाइयां मिल ही जाती हैं। दूसरी ओर, अधिक मुनाफे के लिए अन्यायपूर्ण कीमत वसूलने वाली अधिकांश बहुराष्ट्रीय कंपनियों का मुख्य आधार धनी व विकसित देशों में ही है।

इतना ही नहीं, अन्यायपूर्ण कानूनों का भरपूर लाभ उठाने के अलावा कभी-कभी तो विकसित देश सस्ती

दवाओं के व्यापार में गैर-कानूनी अड़चनें भी उत्पन्न करते हैं। घटिया या नकली दवाओं के विरुद्ध कार्यवाही का बहाना बनाकर कभी-कभी विकसित देशों की सरकारें अच्छी गुणवत्ता की सस्ती जेनेरिक दवाओं के व्यापार पर भी रोक लगा देती हैं या उन्हें ज़ब्त कर लेती हैं। मसलन, दिसंबर 2008 में उच्च रक्तचाप के लिए एक भारतीय कंपनी द्वारा बनाई गई सस्ती जेनेरिक दवा जब ब्राज़ील को निर्यात की जा रही थी, तो हॉलैंड के कस्टम अधिकारियों ने इसे ज़ब्त कर लिया जबकि यह दवा हॉलैंड या युरोप के किसी देश के लिए भेजी ही नहीं गई थी। इस दवा का भारत व ब्राज़ील में कोई पेटेंट नहीं था। अतः किसी अन्तर्राष्ट्रीय कानून का भी उल्लंघन नहीं हो रहा था। बाद में काफी कठिनाई से भारतीय कंपनी इस दवा को वापस प्राप्त कर सकी। उधर ब्राज़ील सरकार ने बताया कि इस घटना की वजह से ब्राज़ील के तीन लाख मरीज़ ज़रूरी सस्ती दवा से वंचित हो गए।

जहां इस तरह की अन्यायपूर्ण कार्रवाइयों पर रोक लगनी चाहिए, वहीं जो कानून सस्ती ज़रूरी दवाएं मरीज़ों तक पहुंचाने में बाधक हैं उन कानूनों पर भी पुनर्विचार होना चाहिए। पर इस समय हवा विपरित दिशा में बह रही है और मुक्त व्यापार समझौते के अन्तर्गत पेटेंट कानूनों को और सख्त करने की आशंकाएं बढ़ रही हैं। इस मुद्दे को जन संगठनों व स्वास्थ्य संगठनों द्वारा मज़बूती से उठाया जाना चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***